अमर-संगीत
श्रीचन्द्रनाथमिश्र 'अमर

# अमर-संगीत

श्रीचन्द्रनाथमिश्र 'अमर'

नवरत्न गोष्ठी
मिश्रटोला
दरभंगा

# प्रस्तुत मुक्तक गीतिकाव्य के संदर्भ में:

कविता परिशुद्ध भावनाओं के दान द्वारा मनोभावों का निर्माण करती है। मनोभाव वह मूल संवेग है, जो यदा-कदा बाह्य वातावरणों से प्रभावित होकर अपनी परिशुद्धता को विकृत कर लेता है। कवि उसी विकृत मनोभाव को, कविता-कला की सम्यक् सम्बोधिसे सस्कृत कर, उसे जीवनोपयोगी बनाने का उपक्रम करता है। कविताओं के सकलित रूप को काव्य कहते हैं, उसमें अलौकिक रस-प्रवणता के साथ-साथ रमणीयता का प्राकृतिक माधुर्य समाहित रहता है। कवि इन्हीं माध्यमों से, जीवन के शुष्क बिम्बको रसवन्त बनाकर, लोक-हित में विसर्जित करता है। कवि-कर्म की सफलता इस बात से नहीं है कि वह कितना लिखता है, अपितु इस बात से है कि वह क्या लिखता है! भावनाओं के पिष्टपेषण से चर्वित-चर्वण का तथ्य दृष्टि-गोचर होने लगता है। कवि कर्म की चरमपरिणति के संदर्भ में दर्शनीय यह है कि कवि ने जीवन के किन उपे-

क्षित विम्बों को, किस रूप में, लोक-हित के लिए समुपस्थित किया है !

सौन्दर्य-विधान कला का गौण पक्ष है, शिव और सत्य का आख्यान हो काव्य-कला का प्रमुख लक्ष्य-बिन्दु है। कवि अपने आत्मभाव की सम्पूर्ण उपलब्धियों को, कवितारूप सर्जना के अन्तराल में रखकर ही, सृष्टि-विधान की भाँति, काव्यकला की सृष्टि करता है। इसी सृष्टि में, कवि की वैयक्तिकता की व्यापकता शाश्वत आलोक समुपस्थित करती हुई जीवन को, अतीत से प्रेरणा, वर्तमान से गति एव भविष्य के स्वर्णिम निर्माण की प्रतीति ग्रहण कर, क्षणिक जीवन के परिवेश के सामुदायिक तत्त्वों की उद्भावना के हेतु अनवरत उद्बोधन के स्वर सुनाती रहती है। सच्चे कवियों से हम शक्ति ग्रहण करते हैं, ज्ञान नहीं ! हमारे हृदय में शक्तियों के अविकसित अकुर प्रच्छन्न रहते हैं, उन्हें विकसित कर, प्रकाश में लाना ही कवि-कर्म की वास्तविक सफलता है। कवि विधि-निषेध का व्याख्याता नहीं, वह तो मात्र, जीवन के शाश्वत निर्माण-हेतु, दिशा-निर्देश का उद्गाता है। दृष्टि-बिन्दु की स्थूलता और सूक्ष्मता पर ही कलाकार की मांगलिक उपादेयता निर्भर करती है।

उक्त काव्यात्मक अवतरणों के आवरणों की तुला पर-जब श्री 'अमर' जी की काव्य-कृतियों को समुपस्थापित करता हूँ, तो ऐसा प्रतीत होता है कि ये जीवन-सौन्दर्य के वस्तुरूप विधान के सक्षम कलाकार के साथ-साथ दिशा-निर्देश के उच्चस्तरीय तत्त्ववेत्ता हैं, जो अपने संचित ओज के भास्वर शक्ति-पुंज से, जीवन की अन्तर्निहित भावनाओं की कलिकाओं को सबल कल्पनात्मक सम्बल से, सुरभितकर; काव्य-गगन को पुलकितकर जीवन के उच्चावच मार्ग को, पोषण और शमन के पाथेय प्रदान करने में पूर्ण समर्थ हैं। कवि की कल्पना-शक्ति बड़ी ही विचक्षण है। वह सृष्टि के परम सौन्दर्य में भी, कल्पना का योग देकर उसे महत्तर बना डालने की चेष्टा करती है। कवि प्रत्यक्ष जीवन के सौन्दर्य को, परोक्ष जीवन के सौन्दर्य के रूप में व्यक्तता का रूप देता है। कवि की अप्रतिम प्रतिभा बुद्धि और तर्क की ओट लेकर जीवन को स्वाभाविक क्रियाशीलन प्रदान करती है! कवि की कविताओं के प्रतिशब्द में अर्थ-व्यंजकता की सुललित

उक्त काव्यात्मक अवतरणों के आवरणों की तुला पर-जब श्री 'अमर' जी की काव्य-कृतियों को समुपस्थापित करता हूँ, तो ऐसा प्रतीत होता है कि ये जीवन-सौन्दर्य के वस्तुरूप विधान के सक्षम कलाकार के साथ-साथ, दिशा-निर्देश के उच्चस्तरीय तत्ववेत्ता हैं, जो अपने संचित ओज के भास्वर शक्ति-पुंज से, जीवन की अन्तर्निहित भावनाओं की कलिकाओं को सबल कल्पनात्मक सम्बल से, सुरभितकर, काव्य-गगन को पुलकितकर जीवन के उच्चावच मार्ग को, पोषण और शमन के पाथेय प्रदान करने में पूर्ण समर्थ हैं। कवि की कल्पना-शक्ति बड़ी ही विचक्षण है। वह सृष्टि के परम सौन्दर्य में भी, कल्पना का योग देकर उसे महत्तर बना डालने की चेष्टा करती है। कवि प्रत्यक्ष जीवन के सौन्दर्य को, परोक्ष जीवन के सौन्दर्य के रूप में व्यक्तता का रूप देता है। कवि की अप्रतिम प्रतिभा बुद्धि और तर्क की ओट लेकर जीवन को स्वाभाविक क्रियाशीलन प्रदान करती है! कवि की कविताओं के प्रतिशब्द में अर्थ-व्यंजकता की सुललित सामर्थ्य है। विम्ब प्रतिपादनगत असामर्थ्य के कारण, कवि, कहीं भी पलायनवादी वृत्ति का प्रश्रय नहीं लेते। कवि स्वस्थ मनोबल, सस्कृत प्रज्ञा, परिष्कृत चेतना एवं प्रांजल

मनोबल के अभिव्यंजन के हेतु सदैव प्रयत्नशील परिलक्षित होते हैं ।

कवि की कविताओं में एक दीर्घकालीन परम्परा का अवलोकन होता है । यही कारण है कि कविताओं में—कहीं शाश्वत जीवन, कहीं सामयिक परिवेश तो कहीं तात्कालिक घटना चक्रों के गत्यात्मक भाव परिलक्षित होते हैं, किन्तु सम्पूर्ण काव्य-धारा में एक ही प्रकार की चिरन्तन मानवोपयोगी चिन्तनधारा की प्रधानता है । कवि के कलापक्ष को, इतनी क्षमता है कि वह भाव-पक्ष के व्यक्तीकरण में पूर्ण जागरूकता का परिचय देता है । जीवन के साथ आनन्द और विषाद के वात्याचक्र निर्बाध गति से चलते रहते हैं । व्यावसायिक उपयोगितावाद के इस अर्थ सकुल युग में, यह नितरां आवश्यक है कि व्यक्ति को, जीवन के घात-प्रतिघात से—कुंठा से एवं संत्रास से बचने के लिए, एक काव्यात्मक परिवेश मिले जो इसके सुषुप्त मानवीय आदर्शों की पीठिका को जाग्रत्कर, उसके देवत्व का पोषण कर सके । कवि ने अपनी समस्त कविताओं के श्लाध्य स्तवकों में इस काव्यात्मक परिवेश का अभिनव निर्माण किया है ।

मनुष्य को साधारणतः अपनी वृत्ति, संस्कार या विचार-

पद्धति के अनुकूल ही काव्य का अर्थ बोध होता है। नवीन और सूक्ष्म अनुभूतिपूर्ण काव्य के मर्म को हृदयंगम करने के लिए केवल विद्वत्ता या उच्च शिक्षा की अपेक्षा नहीं रहती, अपितु अभिव्यक्त करने वाले हृदय के साथ संतुलित भावात्मक प्रज्ञा की आवश्यकता होती है! जो कवि के प्रति हार्दिक सहानुभूति रखता है, वही उसकी काव्यात्मक भाव बल्लरियों के प्रति औचित्य प्रदर्शन कर सकता है। भाव चाहे किसी माध्यम से व्यक्त हो, वह जीवन की सनातनता का संरक्षण करता ही है। कवि को संस्कृत, मैथिली एवं हिन्दी के वस्तुरूप-सौन्दर्य के आख्यान में पूर्ण प्रौढ़ता उपलब्ध है। कवि ने कृतियों की बहुलता तथा उसकी उत्कृष्टता-पूर्ण प्रक्रियाओं से जो जीवन दर्शन के सोपान अभिव्यंजित किए हैं, वे चिरंतन वाङ्मय के अनुपम वैभव तो हैं ही, अपितु जीवन की प्राकृतिक परम्पराओं के उद्घोषक के साथ-साथ अनुप्रेरक भी हैं।

कवि ने, विकासमान परम्परा की दीर्घता के अन्तराल में, गुदगुदी, युगचक्र, ऋतुप्रिया, उनटापाल एवं आशा-दिशा (कविता-संकुल) जल-समाधि (आख्यायिका) वीरकन्या एवं बिदागरी (उपन्यास) समाधान (एकांकी नाटक) मैथिली

आन्दोलन एक सर्वेक्षण (निबंध) एवं निष्णात सम्पादक के रूप में सभी प्रकार के काव्यात्मक प्रभेदों पर लेखनी को, सशक्त भाव से संचरण करने का सुअवसर प्रदान करते हुए, प्रस्तुत कविता कुसुमों की मधुर रागात्मक अभिव्यक्ति में, जो अपरिमित भाव-सौन्दर्य को गुंजित करने की दिशा प्रस्तुत की हैं—वह वर्तमान भौतिकवादी विप्लवों से आक्रांत जीवन-यापन करने वाले मानवों के लिए चिरंतन पाथेय के रूप में तब तक बनी रहेगी, जब तक, जीवन को सत्रास, कुंठा और अनैतिकता से संत्राण के लिए, काव्यात्मक ललित प्रतीक की आवश्यकता का अनुभव होता रहेगा !

मुझे पूर्ण आस्था है कि कवि की प्रस्तुत कृति राष्ट्र-भारती की अमर विभूति बनकर, राष्ट्र-भाषा की गौरव-गरिमा के मण्डन का स्थान ग्रहणकर जन-मानस को अनु-प्रेरणा प्रदान करती रहेगी।

श्री महेश शर्मा, प्रभाकर
एम. ए. द्वय (संस्कृत-हिन्दी)
साहित्याचार्य
हिन्दी-विभागाध्यक्ष-एम. एल. एकेडेमी

शिक्षक दिवस
१९७७

# कुछ अपनी

हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है। किसी भी स्वाभिमानी राष्ट्र को अपनी राष्ट्रभाषा के प्रति गौरव स्वाभाविक है।

साहित्यिक जीवन के आरंभ में हिन्दी में भी कुछ रचना करने की इच्छा हुई। यदा कदा कुछ कविताएँ भी लिखीं। दरभंगा नगर से प्रकाशित होने वाले कुछ पत्र जैसे पंचायती राज, निर्माण, उदय मिथिला-मिहिर, बालक आदि में तथा कुछ दैनिक आर्यावर्त्त के साप्ताहिक संस्करण में कविताएँ, कथाएँ आदि छपती रहीं। कुछ दिनों तक 'पंचायती राज' में व्यंग्य स्तम्भ लेखन, 'निर्माण' का सम्पादन आदि भी करने का मौका मिला। परन्तु सन् ६० के आस-पास मैथिली जो मेरी मातृभाषा है ) में कुछ अधिक कार्य करने का संयोग लगा। नगर से प्रकाशित होने वाले पत्र तिरोहित होते गये। डॉ० श्रीकाञ्चीनाथ झा 'किरण' जीसे पक्के

मातृभाषा प्रेमी से भी हिन्दी में लिखवाया। परन्तु उन्हीं के कुछ पद जैसे—

"हिम गिरि से सागर तक सब ही हैं भारत के ही सन्तान
हिन्दी सब की भाषा है, अब सभी बढ़ाते इसका मान
किन्तु मैथिली का तो केवल मैं ही एक मात्र आधार
मेरे बल पर ही अब तक है इसमें जीवन का सचार"

मेरी प्रेरणा के आधार बने और मैं सर्वांशतः मातृभाषा में रचना करने की ओर प्रवृत्त हो गया।

आरंभिक जीवन की ये कुछ कविताएँ, कुछ इधर उधर नष्ट हो गई, जो बची रहीं उन्हें पुस्तकाकार कर देने का बिचार मन में आया। अतः एक ही पुस्तक में जीवन की अनुभूति मूलक कुछ कविताओं के साथ फुट-कल रचनाएँ भी संकलित कर दी गई हैं। ये जो कुछ हैं अब आपके हाथ में हैं। विशेष कुछ कहना नहीं है।

—'कवि'

डॉ० स्व० कामेश्वर प्रसाद अग्रवाल

की

पुण्य-स्मृति

में

सादर-समर्पित

१

हृदय के उस द्वार को तुम खोल दो ना

आ सके समता
विषमता जा सके भी
रो सके यदि मन
कभी कुछ गा सके भी

आज मेरे करुण स्वर में प्राण मेरे
अमृत घट से ला अमिय रस घोल दो ना
हृदय के उस द्वार को तुम खोल दो ना

हो हृदय की शान्ति
नीरव यामिनी सी
ज्ञान की रेखा—
खिची हो दामिनी सी

मन-गगन में सत्य का स्वर गूंजता हो
प्राण को वह बोल तुम अनमोल दो ना
हृदय के उस द्वार को तुम खोल दो ना

यह अहं का भाव
सिर चढ़ बोलता है
और हालाहाल
लहू में घोलता है
ज्ञान रूपी 'चन्द्र' की सित–चन्द्रिका से
प्राण-सागर में नवल कल्लोल दो ना
हृदय के उस द्वार को तुम खोल दो ना

●

जीवन तो सबको होता है
पर, जीवन किसका होता है?

जिसका अन्तर परम प्रबल है
रहा निरन्तर सहज सरल है
वह क्यों सुख की मधु घड़ियों में
दुख की लड़ी पिरोता है?
जीवन तो सब को होता है
पर, जीवन किसका होता है?

कहता है जग जड़ चेतन म
कहीं परस्पर मेल नहीं है
हृदय-वीन पर तन्द्रिल मृदु स्वर
झंकृत करना खेल नहीं है
यह नन्हा सा उर अन्तर में
युग-युग की पीर संजोता है

जीवन तो सबको होता है
पर, जीवन किसका होता है?

सुख दुख की हिलती छाया में
अचपल नयन थके मुँदते हैं
स्थिर पलकों पर चुपके–चुपके
मन से प्राण कहा करते हैं
इस उलझन में ही अपने को
खोने वाला खोता है

जीवन तो सबको होता है।
पर जीवन किसका होता है ?

३

जीवन को मैं उन सपनों में देखा करता
जीवन में मैं उन सपनों को देखा करता

जीवन मधुमय रसमय सपना
सभी पराया, सब है अपना
अपनेपन के अन्धकार में
अन्धकारमय एक तड़पना

उस तड़पन में मैं जीवन के मधुल प्यार को देखा करता
जीवन में मैं उन सपनों को देखा करता

मानव को मिलती सुषमा नव
नव मानव, उसकी महिमा नव
नव युग की नव नव धारा में
पाता वैभव और पराभव

किन्तु पराभव के पीछे फिर मैं उद्भव को देखा करता
जीवन को मैं उन सपनों में देखा करता

जगमग दीप जला करता है
उर में स्नेह पला करता है,
किन्तु स्नेह के जल जाने पर
जग को दीप छला करता है

फिर भी उस छल पर जलते निश्छल पतंग को देखा करता
जीवन में मैं उन सपनों को देखा करता

मेरी विजय-पराजय क्या फिर
निश्चय और अनिश्चय क्या फिर ?
जीवन और मरण के तट पर
संशय और निःसंशय क्या फिर ?

अपनी धुन ले अपने पथ पर चलते जग को देखा करता
जीवन को मैं उन सपनों में देखा करता।

४

जीवन तो अनजान नहीं है
पर इसकी पहिचान नहीं है

पलकों पर पल तौल तौल कर
पल-पल को संचित कर जोड़ा
पलकों के झटके में आकर
किस निष्ठुर ने इसको तोड़ा

नहीं जानता स्वयं और
मेरे सम्मुख भगवान नहीं है

बिछुड़े नहीं कभी यह मुझसे
मैं तो मन से चाह रहा
लिये लुकाठी किन्तु पुरानी
चुपके चुपके थाह रहा हूँ

मैं ही खुद मेहमान जगत का
जग मेरा मेहमान नहीं है

सुबह, शाम, मस्ती औ' पीड़ा
सुख, दुख जो चाहे रह सकता
कोई नहीं पूछता मुझसे
और न मैं ही कुछ कह सकता

हूँ मकान का मालिक पर
यह मेरा असल मकान नहीं है।

बहुत खोजने पर न मिला है
किससे पूछूँ परिचय इसका
कब से इसने साथ लिया है
कौन कहेगा निश्चय इसका

होता है अवसान, किन्तु
सचमुच इसका अवसान नहीं है
जीवन तो अनजान नहीं है
पर इसकी पहचान नहीं है।

जग कहता अभिशाप इसे, पर
जीवन तो वरदान मिला है

जगके मग पर पग बढ़ता है
गिरिश्रृङ्गों पर जा चढ़ता है
निखिल विश्व के धाता पर
कुछ मन की बातें गढ़ता है

दुख के संबल ले चलने पर ही
अन्तर ज्योतिर्मान मिला है

नभ के अनगिन जलते तारे
इन–नयनों में ज्योति हमारे
किस सहृदय ने इसे जलाया
कोई उसका नाम बता रे!

उसे ढूढ़ने को मानव को
अभिनव अनुसन्धान मिला है

मन की अनगिन अभिलाषाएं
अपनेपन की परिभाषाएं
नूतन पथ, पाथेय मधुरतर
कुछ स्फुट, कुछ अस्फुट भाषाएं

क्रन्दन यद्यपि मिला, किन्तु कुछ
संग मधुरतम गान मिला है

पंचभूत के सूक्ष्म तत्त्व को
देवलोक के उस प्रभुत्व को
क्षण भंगुर संसार और फिर
इस मनुष्य को, मनुष्यत्व को

कौन सकेगा जान इसी से
ज्ञान रूप भगवान मिला है
जग कहता अभिशाप इसे पर
जीवन तो वरदान मिला है

जीवन की गहराई तक है
पहुँच सका संसार न अबतक
मानव को मिल सका प्रभो !
जीवन का पारावार न अबतक

तुमसे लेकर एक मधुरता
जगसे केवल कटुता पाकर
क्या कर सकता है यह दुर्बल
रह जाता है हृदय दबाकर

शुष्क, अधर मिल सकी प्राण को
करुणा की रसधार न अबतक
जीवन की गहराई तक है
पहुँच सका संसार न अबतक

कर्म कठिन अति तीव्र मनोगति
ज्ञान कठिन, दुर्बल मानव गति
क्षण क्षण में नूतन कोलाहल
होता ही रहता है नितप्रति

उस पर भी मिट सका प्रभो !
जग पर से अत्याचार न अबतक
मानव को मिल सका प्रभो !
जीवन का पारावार न अबतक

मंजिल दूर चरण केवल दो
अपने चरण–कमल का बल दो
चंचल मन, न मनन करने की
क्षमता, इसको निश्चल कर दो

चंचलतावश दूर हुआ है
मन से नयन-विकार न अबतक
जीवन की गहराई तक है
पहुँच सका न संसार न अबतक

७

जग मुझसे पूछा करता है
तुम क्या हो, यह क्रन्दन क्या है
मैं अपने से पूछा करता
मैं क्या हूँ, यह जीवन क्या है

मन है मौन, मौन जग सारा
मौन बना है प्रश्न हमारा
अम्बर मौन खड़ा है ऊपर
भू पर मौन स्वरूप तुम्हारा

मैं तुमसे पूछा करता हूँ
तुम क्या हो, यह चिन्तन क्या है

हंसता रोता चांद अकेला
फैला नीलाकाश तुम्हारा
हंसना रोना साथ मिला दो
हो मधमय उच्छ्वास हमारा

मैं तुम से पूछा करता हूँ
यह धूमिल गगनांगन क्या है।

यह लघुतर आकार हमारा
यह विस्तृत संसार तुम्हारा
जीवन सारा बीत चला पर
मिला न पारावार तुम्हारा

सृष्टि और संहार बीच में
कह दो सत्य चिरन्तन क्या है

८

मैं गीत पुराना गाता हूँ

जीवन की करुण कथा में ही
अन्तर की मधुर व्यथा मेरी
यह तरल नयन कह देता है
जग से दुख दर्द कथा मेरी

अन्तर में आह तड़पती है
बस उन्हीं पुरानी बातों से
मन की आकुलता बढ़ती है
प्रिय के कोमल आघातों से

जीवन का पृष्ठ उलटता हूँ
मन ही मन कुछ दुहराता हूँ
मैं गीत पुराना गाता हूँ

जब उठते पाँव हमारे तो
अन्तर में आशा बंध जाती

मेरे पद – संचालन में ही
रे ! मधुर रागिणी सध जाती

हो साध न पूरी साधन बिन
इसका दुख मुझे नहीं होगा
मैं हूँगा अपने कहीं और
मन का अभिलाष कहीं होगा

दुख जीवन को दुलराता हूँ
मैं भी दुख को सहलाता हूँ

मैं गीत पुराना गाता हूँ

एकाकी जीवन ले आये
एकाकी पथ पार करो तो

आता नभ में चाँद अकेला
जग का मग जगमग हो जाता
आता है तूफ़ान अकेला
जग का पग डगमग हो जाता

तुम मानव होकर एकाकी
मानवता साकार करो तो
एकाकी जीवन ले आये
एकाकी पथ पार करो तो

एक अनेक बना लेता है
किन्तु अनेक न एक समझता
इस उलझन में इन मर्त्यों के
हृदय-वीन का राग उलझता

यदि समर्थ हो, डूब रहा है,
अपना बेड़ा पार करो तो

एकाकी जीवन ले आये
एकाकी पथ पार करो तो

सोचो, समझो, कदम संभालो,
यह दुनिया आसान नहीं है
उच्च शिखर है, किन्तु देख लो
बढ़ने को सोपान नहीं है

है संकरी पगडंडी, लेकिन
अपना पथ विस्तार करो तो
एकाकी जीवन ले आये
एकाकी पथ पार करो तो

सुख-दुख के सम्मिश्रण से ही
जीवन का निर्माण हुआ है

दुख का भी गहरा कटु अनुभव
होता ही रहता है अभिनव
और मधुर क्षण का टिकना ही
रहता है सर्वथा असम्भव

इसीलिये सन्दिग्ध हृदय ले
मानव व्याकुल प्राण हुआ है

सुख के मीठे सपने पलते
हम जिस पर दिन रात मचलते,
किन्तु मचलना रुक जाता है
जीवन रवि के ढलते ढलते

कहो आज तक पंकिल मग में
किसका इससे त्राण हुआ है

दुख की मंजिल पार करो तो
सुखमय यह संसार करो तो
दलितों को उल्लसित बनाने
का अभिनव व्यापार करो तो

इस मंगलमय पथ पर मेरा
निठुर साहसी बढ़ चल, बढ़ चल
चलना और मचलता दोनों
रहे साथ जीवन में प्रतिपल

इस लघु जीवन से भी अबतक
भूतल का कल्याण हुआ है

कैसी समझ तुम्हारी है जो
तुम मुझसे गाने कहते हो

कौन मिला जीवन में अपना
जिसको अपनाने कहते हो

देख चुका हूँ दुनिया सारी
अपने रँग मे रँगी हुई है

कौन मिला सहलाने वाला
जो मन बहलाने कहते हो

नभ में हैं ये चांद सितारे
पावस की है रात भींगती

सम्मुख है तस्वीर तुम्हारी
इसका क्या माने कहते हो

मैं करता हूँ बात, तुम्हारी
आँखें क्योंकर झेंप रही हैं

उत्तर के बदले में केवल
तो हम क्या जाने कहते हो

ऐसी उलझन लगी हुई है
जिससे थककर हार गया हूँ

फिर मेरी हस्ती हो क्या जो
मुझसे सुलझाने कहते हो

कैसी समझ तुम्हारी है जो
तुम मुझसे गाने कहते हो

नित दिनकर आया करता है
आसमान के रंच मंच पर
विमल चन्द्र मुसकाया करता
जग के इस विस्तृत प्रपंच पर

नित सन्ध्या आया करती है,
तम में निज मुख चन्द्र छिपाये
जीवन की इस चञ्चलता पर
मेरा अन्तर क्यों घबराये ?

रुक जाती जब साँस वायु की
तो तूफान भयंकर आता
जीवन की गति रुक जाने पर
प्रलय राग प्रलयंकर गाता

राजमहल से झोंपड़ियों तक
अपनी डफली मौत बजाती

मिटते रहने पर भी सन्ध्या
नित तारों से रात सजाती

वही पराया बन जाता, जग
जिसको हृदय खोल अपनाता।

तो इन छोटी सी बातों पर
मेरा अन्तर क्यों घबराता ?

इस सँकरी पगडंडी पर पग
सँभल सँभल कर रखता जा तू

पथ में मिलनेवालों के अन्तर
का मर्म समझाता जा तू

प्रकृति पुरुष के क्रीड़ा - स्थल का
मोहक चित्र निरखता जा तू

इस जीवन में जो भी कटु–मधु
मिलता जाता, चखता जा तू

रखता जा बस ध्यान कि मन उस
उलझन में न उलझने पाये

जल में कमल समान रहे तो
मेरा अन्तर क्यों घबराये

मैं भी क्या कुछ गा सकता हूँ

बनकर छन्द उमड़ पड़ती है
द्रवित हृदय की अमित वेदना
साधक के स्वर में कहती है
मुखरित होकर स्वयं साधना

उस स्वर को मैं अपने स्वर में
कैसे कहो सजा सकता हूँ

अपने को अपनी धुन में
विस्मृत होकर जब खो जाता हूँ
भले न कोई रहे हमारा
मैं तो अपना हो जाता हूँ

तुम चाहो तो उसे छिपा लो
मैं क्या इसे छिपा सकता हूँ

होता है अनुराग न जबतक
नहीं रागिणी सध पाती है

बादल भले भुजा फैलाये
क्या बिजली भी बँध पाती है

तुम चाहो स्वर सप्तक साधो
मैं क्या वीणा बजा सकता हूँ

जीवन है तो जलना सीखो
आँधी में भी पलना सीखो
तुम्हें सीखने की इच्छा हो
शशि से खूब मचलना सीखो

स्वय अमर हो सका न अबतक
कैसे तुम्हें बना सकता हूँ
मैं भी क्या कुछ गा सकता हूँ

Scanned by CamScanner

४

दुनिया तो इसको कहते हैं

पत्तों के मृदु-मर्मर में भी प्राणी यों खूब मचलते हैं

जीवन की सरल कहानी में
भोलेपन में नादानी में
पत्तों के हिलने डुलने पर
आखों से बहते पानी में

हिमकण जैसे दुख के तापों में
अपने आप पिघलते हैं

बच्चों की मृदु मुस्कानों पर,
दीपक पर, इन परवानों पर,
उन्मुक्त गगन में उड़नेवाले
पंछी से दीवानों पर

इन आह भरे नयनों में मृदु–
मृदु आँसूकण यों पलते हैं

अन्तर में बड़ी विकलता हो
सिरहाने पड़ी सफलता हो
अपने को आप समझने की
आतुरता हो, विह्वलता हो

चलते–चलते, गिरते – पड़ते
आखिर वे स्वयं सँभलते हैं

जब मैंने देखा प्रथम बार
इन आँखों से फिरफिर निहार
थे बाल सूर्य तरुणाई की
अँगराई ले फिर क्षितिज पार

मन मन्दिर में थी ज्योति नहीं
जीवन, जीवन यों छलते हैं।

मनकी खिड़की से झाँक-झाँक
अन्तर में कौन सिसकता है
स्मृति-पथ पर से मन्थर गति में
धीरे वह कौन खिसकत है

कहता हूँ दो क्षण रुक जाओ
तुम मन की व्यथा न बतलाना
मेरी ही राम कहानी सुन.
मेरे अन्तर को सहलाना

मेरा परिचय मिल जायेगा
मैं भी मन हल्का कर लूँगा
यदि अमिय मिले तो तुम लेना,
मैं ? मैं तो सिर्फ जहर लूँगा

मैं प्यासा हूँ तो रहने दो
मन की अभिलाषा कहने दो
रोको न मुझे करुणा को धारा
में इच्छा भर बहने दो

क्रन्दन सुन पड़ता जहाँ, वहीं
होता था मधुमय गीत कभी

रोता है वर्त्तमान, लेकिन
हँसता था वहीं अतीत कभी
लेकिन इन दोनों को छोड़ो
अब हमें भविष्य बनाना है
रोते हँसते हिलमिल करके
जीवन को पार लगाना है

करता है कोई अट्टहास
गर्जन सुनकर घबराना मत
उसका प्रलयंकर रूप देख
पग पीछे कभी हटाना मत
जीवन है मिला उछलने को
जीवन है मिला मचलने को
जीवन है मिला विवेकी को
दुनिया का रंग बदलने को

बस वही विवेक हृदयतल में
सद्गुण का अंकुर बोता है
अवगुण का अंकुर देख मगर
अन्तर में चुपके रोता है

क्या न मुझमें आज वह बल आ सकेगा ?
प्राण ! तेरे मृदु चरण की लघु किरण भी
क्या न यह अज्ञात दुर्बल पा सकेगा ?

क्या न मेरी मूक वाणी
छन्द बनकर गा सकेगी ?
क्या न मेरी आह नयनों में
उछलकर आ सकेगी ?

पूछता हूँ आज तुम से विकल मन की बात अपनी
क्या न जीवन फिर मधुर पल पा सकेगा ?

आह अपनी ज्वाल से
जग को जला सकती नहीं क्यों
आह अपनी शक्ति से
हिमगिरि गला सकती नहीं क्यों

किन्तु मेरी आह जग को फिर नयी संजवनी दे
चिर पिपासा को बुझाने क्या न बादल छा सकेगा

जो किनारा काटता है काट ले, पर
मैं लहर के साथ बहता ही रहूँगा

क्या करूं मैं जग नहीं पहिचान पाता
औ' हृदय की भावनाएं भी छिपाता
एक तो जीवन व्यथाओं से भरा है
और उस पर वेदना के गीत गाता

आह मेरी मिल गई जग को अगर तो
क्या करेगा आह में मुझको जलाकर

जो जलाना चाहता है वह जला ले
मैं हृदय की बात कहता ही रहूँगा

है मुझे हिम्मत जगत को प्यार कर लूं
है मुझे ताकत अकेले पार कर लूं
सोचता ही रह गया जीवन डगर पर
मैं नया छोटा अलग संसार का लूं

दूर हो पाती नहीं तृष्णा मनुज से
जो कि मैं भी खोल लूँ बन्धन पुराना

जो डुबाना चाहता है वह डुबा ले
मैं व्यथा का भार सहता ही रहूँगा

जो मनाता है मरण त्योहार अपना
जो जलन को मानता उपहार अपना
जो कि जीवन के मधुर क्षण को लुटाकर
मानता है प्यार को आधार अपना

प्यास से सूखे अधर
आँखें तरल हैं
दूर रहकर भी नहा ले
आँसुओं से

जो छुड़ाना चाहता है वह छुड़ा ले
मैं उसी का हाथ गहता ही रहूँगा

भूलूँ ? लेकिन भूलूँ कैसे
मानव हूँ, संग मनुजता है
मन के कोने में आशा भी
पलती है, यह दुर्बलता है

जिसकी करुणा की छाया में
मिलती आई है नींद मधुर
जिसके इंगित पर माया में
पलती आयी उम्मीद मधुर

जिसकी ममतामय भाषा में
सपने का मधुमय गीत मिला
जिसकी सुमधुर मुस्कानों में
मुझको जीवन संगीत मिला

जिसकी स्वर लहरी पर मेरी
स्वर लहरी निखर उठी सहसा
जिसके क्रन्दन में करुणा की
दो बूँदें बिखर उठीं सहसा

जिसके छूने से जीवन की
पतझड़ में फिर मधुमास खिला
जिसकी कोमल झंकारों पर
अग-जग का नीलाकाश हिला

जिसने मेरी इस कुटिया को
भू पर ही स्वर्ग बना डाला
नीचे से लेकर ऊपर तक
अविषम नव वर्ग बना डाला

जिसकी पुतली पर प्रतिबिम्बित
मुझको सारा संसार मिला
जिसकी छवि में मेरे कवि को
बढ़ने का नव आधार मिला

जिसको निहार कर ये आँखें
रे फूली नहीं समाती थीं
वेदना भाग जाती पल में
भावना उमड़ आ जाती थी

वह रूप भला इन आँखों से
मैं कैसे दूर करूँ बोलो
मेरे अन्तर की व्यथा जरा
अपनी धड़कन पर ले तोलो

सीधे कह देने से केवल
यह प्रश्न नहीं हल होता है
केवल धारा पर बहने से
मन कभी न निर्मल होता है

तुम गीतों के रूप सँवारो
मैं तो उनमें प्राण भरूँगा

करुणा की छाया में मानव मन
आकुल – आकुल फिरता है
सुख के क्षण आने के पहले
दुख का बादल आ घिरता है

आज गीत के बदले उसके
स्वर में क्रन्दन की परछांई
करवट ले सकती न इसीसे
लेती रह रह कर अँगराई

अपने अन्तर की ज्वाला से
उसका भी अनुमान करूँगा

तुम गीतों के रूप सँवारो
मैं तो उनमें प्राण भरूँगा

भूल गया मानव मधु-लीला
उसे गरल उपहार मिला है
आशा का संचार कहाँ जब
जीवन का आधार हिला है

युग युग से संघर्ष निरत हो
देख रहा था मीठा सपना
स्वर-सन्धान भला क्या जाने
जिसने सीखा केवल तपना

तुम अन्वेषण करो सुधा का
लेकिन मैं विषपान करूँगा

तुम गीतों के रूप संवारो
मैं तो इनमें प्राण भरूँगा

नीलकण्ठ के अट्टहास में
नव उल्लास उमड़ आयेगा
पल भर में देखेगी दुनिया
यह इतिहास बदल जायेगा

युग के अणु-अणु में नवजीवन
कुछ क्षण में भरनेवाला है

जन-बल का नव सूर्य तिमिर का
शेष अंश हरनेवाला है

तुम मदमत्तों की जय बोलो
मैं उनका अभिमान हरूंगा

तुम गीतों के रूप संवारो
मैं तो उनमें प्राण भरूंगा

याद रहे युग-युग से पीड़ित
जिस दिन यह जनता ऊबेगी
तो नृशंसता की ज्वाला जा
करुणा सागर में डूबेगी

दिग् दिगन्त में गूंज उठेगी
मधु मिश्रित मानव की भाषा
हृदय-हृदय में उछल पड़ेगी
युग-युग की सोई अभिलाषा

तुम संकट से प्राण बचाओ
मैं तो जीवन दान करूंगा

तुम गीतों के रूप संवारो
मैं तो उनमें प्राण भरूंगा

अन्धकारमय जीवन में
आलोक लिये बढ़ता आता हूँ

राह दिखाने वाला कोई
मिला राह में मुझे न अबतक
दुनिया को जो कुछ मिलता है
मिला आह में मुझे न अबतक

अपने लिए अनोखी अपनी
राह मगर गढ़ता आता हूँ

मिला दिशा का ज्ञान नहीं, पर
इसके लिए न मन घबराता
चलना है, चलता जाता हूँ,
पथ भी खुद बनता ही जाता

गिरि शृंगों पर नहीं, किन्तु
तलहटियों पर चढ़ता जाता हूँ

भाग्य भरोसे रहा न, इस पर
अब तक है विश्वास जम सका
दुनिया में रहता हूँ, लेकिन
इसमें भी मन नहीं रम सका

पढ़ न सका औरों को, लेकिन
अपने को पढ़ता जाता हूँ

कुछ ने ठोकर दी, तो कुछ ने
अपना प्यार मुझे दे डाला
उर-अन्तर में बड़े यत्न से
मैनें दुख को पोसा-पाला

औरों के सिर दोष न मढ़कर
अपने सिर मढ़ता जाता हूँ

अन्धकारमय जीवन में
आलोक लिये बढ़ता आता हूँ

अन्तर के भाव सजग होंगे
तुम रहो नयन-पथ पर मेरे

तेरी गुरुता में यह मेरी
लघुता पल में खो जायेगी

जीवन संस्कृत हो जायेगा
साधना सफल हो जायेगी

फिर तुमसे नहीं विलग होंगे
तुम रहो स्मरण-पथ पर मेरे

अन्तर के मैल मिटाने को
युग युग से आकुल मन मेरा

तेरे शुभ दर्शन पाने को
है उत्सुक आज नयन मेरा

आलोकित मेरे मग होंगे
तुम रहो श्रवण-पथ पर मेरे

अपने को आप भुला दूंगा
तेरे अनुभव का बल पाकर

मेरा विश्वास अटल होगा
अपने पर, तुम पर, आशा पर

दृढ़ मेरे दोनों पग होंगे
तुम रहो मरण–पथ पर मेरे

अन्तर के भाव सजग होंगे
तुम रहो नयन पथ पर मेरे

दूर है मंजिल सदा से जानता हूँ,
किन्तु मैं विश्वास लेकर चल पड़ा

राह के कांटे अलग करने पड़ेंगे
भाव भी मन के सजग करने पड़ेंगे
आंधियों का काम ही तो रोकना हैं,
किन्तु मैं उल्लास लेकर चल पड़ा हूँ

तुम मिले हो राह में यह भी भला है
मैं जला हूँ आह में यह भी कला है
तुम हंसोगे बात सुनकर के अनोखी,
किन्तु मैं उपहास लेकर चल पड़ा हूँ

वंचना से आज जीवन व्यस्त सा है
आज के व्यवहार से मन त्रस्त सा है
कांपते हैं पांव भी जब हूँ उठाता,
किन्तु मैं उच्छ्वास लेकर चल पड़ा हूँ

आज क्यों निश्चय करूँ होगी विफलता
कौन कह सकता मिलेगी ही सफलता,
किन्तु आशा एक तो मन में बँधी है
जो कि उर में प्यास लेकर चल पड़ा हूँ

देखकर उसको हृदय खिलता रहेगा
स्वाद जीवन का मधुर मिलता रहेगा
घोर तम से आज पथ आच्छन्न सा है,
किन्तु शुभ्र प्रकाश लेकर चल पड़ा हूँ

सुन रहा हूँ बढ़ रहा है आज क्रन्दन
है जटिल संसार का यह मोह-बन्धन
जानकर भी बढ़ रहा हूँ आश लेकर
जो कि उज्ज्वल हास लेकर चल पड़ा हूँ

तुझसे कह दूँ पीड़ा अपनी
इसमें भी तो लाचारी है

अन्तर तो कभी उबलता है
कुछ भार व्यथा का कम होवे
मैं भी रोऊँ, तुम भी रोओ
औ' साथ हमारे जग रोवे

करुणा की धारा फूट पड़े
लहरों से हलचल हो सागर
तेरा अक्षय भण्डार बने
मेरे नयनों का यह गागर

लेकिन इससे क्या लाभ मुझे
मैं जग को व्यर्थ रुलाऊँ क्यों
अपने जो आप पिघलता है
उसको मैं व्यर्थ गलाऊँ क्यों

रोने की बारी बीतेगी
भागेगी पीड़ा भी अपने
सच वे होंगे जो आज
दिखाई देते हैं पूरे सपने

जो कहता हूँ, कह लेने दो,
तुम अपनी व्यथा न बतलाना
मेरी ही राम-कहानी सुन
मेरे अन्तर को सहलाना

यदि मैं उसका आभारी हूँ
वह भी मेरा आभारी है
तुझ से कह दूं पीड़ा अपनी
इसमें भी तो लाचारी है

तू चल मेरे साथ रे!
कला आजकी बिकती जाती
हृदयहीन के हाथ रे!

युग चलता है अपने पथ पर
तू उठ, चल अपने पग–रथ पर
यह तो पहुँच चुका है 'इति' पर
पर, तू तो है इसके 'अथ' पर
चलते चलते रात कटेगी

होगा उज्ज्वल प्रात रे!
तू चल मेरे साथ रे

चलने की जो चाह बनी है
तो फिर लाखों राह बनी है
मंजिल तक जाने को आकुल
दुनिया लापरवाह बनी है
एक एक कर युग बीतेगा

दिन की कौन बिसात रे!
तू चल मेरे साथ रे!

जीवन क्या ? चिनगारी है यह,
जलने का अधिकारी है यह,
सुलझाकर उलझनें सभी,
जय पाने की तैयारी है यह
आततायियों पर होने
वाला है वज्र निपात रे!
तू चल मेरे साथ रे!

साहस, औ' विश्वास मिला है
मन में अतुल प्रकाश खिला है
पूरब से लेकर पच्छिम तक
धरा हिली, आकाश हिला है
दुख के घन फटने वाले हैं
बीत चली बरसात रे!
तू चल मेरे साथ रे!

चला आता हूँ अपने पथ पर
लेकर भावों के तूफान
कि पूरे हो जायेंगे मेरे
जीवन के सारे अरमान

दिशाएँ मौन, स्तब्ध आकाश,
मगर हँसती, दुनियाँ अनजान
कि तिरता हुआ उदधि में लखकर
मेरा छोटा सा जलयान

यही है पागलपन की बात
न की मैनें अबतक परवाह
व्यथामय कथा उलझती रही
तड़पती रही किनारे आह

न देखा मैनें अबतक लौट,
न पूछा क्या है इसका मर्म
समझता रहा कर्ममय भूमि
कि जीवन में है कर्म प्रधान

गरजता रहा सिन्धु इस ओर
कड़कती रही बिजलियाँ दूर
कि मिलकर करने मेरे मन के
भावों को सब चकनाचूर

मगर हूँ अबतक मैं निर्भ्रान्त
भले दुनियाँ समझे भयभीत
अभी तक मैं गाता आया हूँ
मस्ती में जीवन संगीत

भला कैसे छू सकती क्लान्ति
अगर है अन्तर में उल्लास
न घबराने की कोई बात
हृदय में हो अटूट विश्वास

भले हो मंजिल मेरी दूर,
मगर मैं युग-युग से गतिमान
लुढ़कती रहे राह पर विघ्न
और बाधाओं की चट्टान

जीवन के उत्थान पतन के क्रम को भी मैनें देखा है
दुर्बलतावश होनेवाले भ्रम को भी मैनें देखा है
देखे हैं शत शत सपने, फिर देखी हैं उद्दाम लहर भी
अमिय स्वाद यदि चख पाया तो चखा कभी दो घूंट जहर भी
सौ-सौ अरमानों को छोटे प्राणों में पलते देखा है
अंगारों पर चलते-चलते लाखों को बलते देखा है
मुझको भी है चाह चलूं, जूझूं जीवन के संघर्षों से
करता हूँ अभ्यास आज से नहीं, आज कितने वर्षों से
साथी तुम चिनगारी फूँको, मैं तो ज्वलित अमिट ज्वाला हूँ
जीवन पथ पर गिरते-पड़ते मरकर भी जीनेवाला हूँ
सजे हुए उपवन में भी कुछ फूलों को झड़ते देखा है
कितनी उज्ज्वल प्रतिभाओं को कूड़ों में सड़ते देखा है
तो फिर इसकी चिन्ता क्या हो, जीवन के कितने अनुभव हैं
बुद्धि, विवेक, ज्ञान औ' चिन्तन, कितने ही अनुपम वैभव हैं
इनका एक भरोसा साथी ! रख, मन में आगे बढ़ना है
विजित हिमालय पर मत पूछो, उससे भी ऊपर चढ़ना है
सच पूछो तो कर्म-भूमि में, केवल श्रम का ही लेखा है
जीवन के उत्थान पतन के क्रम को भी मैनें देखा है

तुम पूछ रही हो मुझसे जीवन में क्या क्या देखा
पहचान न पायी मैनें जीवन की धुंधली रेखा
संघर्ष यहाँ होता है सब दिन से समझ रहा हूँ
अनजान किसी उलझन में अपने यों उलझ रहा हूँ
जीने का मन करता है इस मर्त्यलोक में आकर
मरने की सुनकर चर्चा मन रह जाता घबराकर
भगवान छिपा बैठा है, निश्चिन्त न जाने क्योंकर
निष्ठुर के सम्मुख जाकर क्या होगा रोकर, धोकर
मैं हृदय थाम लेता हूँ विधि की इस निष्ठुरता पर
लज्जित होना पड़ता है अपनी इस कायरता पर
रोने हँसने पर मेरा अपना अधिकार नहीं है
पर, हँसना हो या रोना, कुछ भी बेकार नहीं है
मुस्कान अधर से बाहर होने पर मन खिल उठता
क्रन्दन में भी वह बल है, रोने पर जग हिल उठता
कैसे दिल खोल दिखाऊँ जो तुम अन्तर पहिचानो
मेरे मन की पीड़ा को तुम अपनी पीड़ा मानो
तुम जैसा समझ रहे हो वैसा संसार नहीं है
फिर भी कैसे कह दूं मैं जीवन से प्यार नहीं है

पहिचानो पहले अन्तर को
फिर स्वर को पहिचानो
छान सको तो दृग सागर से
दो कण मोती छानो

सागर के अन्तर की बातें लहरें बोल रही हैं
मेरे हिय सागर को आहें आज टटोल रही हैं

डोल रहा है नभ का चन्दा, दूरी तोल रहा है
मेरा मन-पंछी आकुल हो नव स्वर घोल रहा है

डूब रहे हैं एक-एक कर देखो सभी सितारे
मेरे मन के भाव सिमटते जाते इसी सहारे

मैंने अपनी मानी गलती
तुम भी अपनी मानो
जान सको तो पहले मेरे
जीवन को ही जानो

किसकी सुधि मेरे अन्तर में लेती है अँगराई
सकेगा कौन दूसरा उस छवि की गहराई

सुरभित हो न सकेगा
मेरे जीवन–वन का कोना
होकर वही रहेगा आखिर
जो कुछ होगा होना

समय बीतता जाता फिर भी
घोर तिमिर है छाया
मेरा माँझी कूल छोड़ने को
अतिशय अकुलाया

मैंने मन में ठान लिया है
तुम भी मन में ठानो
खुली नाव यह पाल तनी है
तुम भी अपनी तानो

विपद की आँधी आती है
तो मन घबरा सा जाता है

बहुत तो रह जाते हैं मौन
सहारा देनेवाला कौन,

उमड़ कर अन्तर का तूफान
निकल बाहर आ जाता है
तो मन घबरा सा जाता है

वेदना बढ़ती ही जाती
रे, चिन्ता सिर चढ़ती जाती

असल में यही समय है जिसमें
पौरुष आँका जाता है
तो मन घबरा सा जाता है

जिसी पर रहता है विश्वास
उसीसे होता हृदय हताश
बिना फूके ही कदम उठाने वाला धोखा खाता है
तो मन घबरा सा जाता है

किया करता है जितना गौर
उलझती जाती उलझन और
ठौर के बदले में ठोकर
आसानी से पा जाता है
तो मन घबरा सा जाता है

चलेगा जो न कलेजा थाम
चलेगा कभी न उसका काम
यही है एक राह इन्सान
ठिकाने पर आ जाता है
तो मन घबरा सा जाता है

न जाने किससे मिला विषाद
युगों से ढोता आया हूँ

विषमता के घुमड़े घन घोर
कि घेरे जीवन–नभके कोर

उसी की पाकर चंचल छाँह
घड़ी पल सोता आया हूँ
युगों से ढोता आया हूँ

किया मन में जब जो संकल्प
न ढूँढ़ा उसके लिए विकल्प

भले कोई न हुआ मेरा, मैं
सबका होता आया हूँ
युगों से ढोता आया हूँ

न समझा मैंने योग, वियोग
जिसे रटते रहते हैं लोग

कर्म के पथ पर अपने को
अपने में खोता आया हूँ
युगों से ढोता आया हूँ

मनुज का जितना हुआ विकास
बढ़ी उतनी पैसे की प्यास
प्रकृति का स्वामी बनता दास
देख यह रोता आया हूँ
युगों से ढोता आया हूँ

जगत में ढूँढ़ा बहुत प्रकाश
अधिकतर होना पड़ा निराश,
किन्तु अन्तर को केवल एक
किरण से धोता आया हूँ
युगों से ढोता आया हूँ

निराशा ने फैलायी बाँह
कि आशा ने दी स्वप्निल छाँह
इसी के साये में दिल के
अरमान सँजोता आया हूँ
युगों से ढोता आया हूँ

पला नित संघर्षों के बीच
नयन-जल से अन्तर को सींच
अनुर्वर उर में केवल वीज
शान्ति का बोता आया हूँ
युगों से ढोता आया हूँ

मेरे नयनों में आज अचानक
क छाया गड़ गयी
किसी की छाया गड़ गयी

बदल सकता है नहीं स्वभाव
बदलते रहते मन के भाव
साथ में लेकर अमिट अभाव
व्यथा आँखों में उमड़ गयी
किसी की छाया गड़ गयी

बुद्धि लेकर विवेक की तुला
उसी पर उन भावों को सुला
हृदय का द्वार छोड़कर खुला
तर्क से आते ही लड़ गयी
किसी की छाया गड़ गयी

दीनता की फैली यह बाँह
ताड़ की यह पतली सी छाँह
मिली, अपने में आप तवाह
जिन्दगी ही पूरी सड़ गयी
किसी की छाया गड़ गयी

खिले थे आशाओं के फूल
निराशा के भूले पर भूल
सुपथ पर भी पा अगणित शूल
सभी पंखुड़ियाँ झड़ गयी
किसी की छाया गड़ गयीं

गया साहस अन्तर को छोड़
वेदना मन को रही मरोड़
उदासी से ही नाता जोड़
भावना इससे जकड़ गयी
किसी की छाया गड़ गयी

क्षोभ का उठा एक तूफान
मारकर चुटकी में मैदान
छोड़ कर जीवन को सुनसान
कामना कुंठित अकड़ गयी
किसी की छाया गड़ गयी

सुना करता था जिसका नाम
उसी चिन्ता को लाख प्रणाम
कि जिसकी जीवन पर अन्जान
नजर तिरछी आकर पड़ गयी
किसी की छाया गड़ गयी।

किसके नयनों में मेरे
सपनों का मधु संसार
मेरे प्राणों में किसके
प्राणों का मृदु झंकार

वह कौन ? पास मैं जिसके
पर मुझसे दूर सदा वह
बन्धन में मैं हूँ, लेकिन
मुझसे मजबूर सदा वह

बिजली सी आभा किसकी
मेरे मानस में चमकी
युग की सोयी अभिलाषा
जूही सी खिलकर गमकी

मैंने किसको देखा है
भावना जगत में फिरते
मैंने किसको देखा है
कल्पना – –गगन में घिरते

पहचान रहा हूँ, लेकिन
पहचान नहीं पाता हूँ
किसकी व्यापकता में जा
बन व्याप्य छिपा जाता हूँ

चिर परिचित, किन्तु अपरिचित
अब मन की उलझन खोलो
ओ रोम रोम के वासी !
मेरी भाषा में बोलो

## सपूतों का सपना

हम गाँवों की झोपड़ियों को
महल बनायेंगे सोने का
हम धरती की मिट्टी से ही
कमल खिलायें सोने का

ईश्वर के वरदान रूप में
मिली निराली धरती सारी
जिस धरती के अन्तस्तल में
निधियाँ बिखरी न्यारी-न्यारी

कहने वाले कह देते हैं
करना उनका काम नहीं है
सच पूछो तो श्रमशीलों का
नाम यहाँ बदनाम नहीं है

अपनी मिहनत से प्राणी को
हम नव जीवन दान करेंगे
आज मिला अवसर फिरसे हम
सुधा गरल सब पान करेंगे

संभलो अपना कदम सँभालो
आज दूसरा मौका आया
बूढ़े भारत की हड्डी में
आज नया उल्लास समाया

सींच सींचकर गरम पसीना
इस मिट्टी को तरल बनाओ
कड़ो धूप में तपो और जगती
पर शान्ति सुधा बरसाओ

आज देश स्वाधीन हो गया
इसका नव निर्माण चाहिये
दुख दारिद्र्य, विवशता से
जग की जनता को त्राण चाहिये

पंचतत्त्व निर्मित हम मानव
पंचशील सिद्धान्त हमारा
पंचो के हाथों में हमने
सौंप दिया है शासन सारा।

आज प्रकृति के साथ निरन्तर
चलता है संघर्ष हमारा

मुट्ठी में तूफान लिये
हँसता है भारतवर्ष हमारा

ज्ञान और विज्ञान समन्वित
हो जाएँ, यह नया मोड़
याद रहे युग और मनुज के
बीच विश्व में आज होड़ है

आज सपूतों के सपनों को
अवसर दो पूरा होने का
गाँवों की हर झोंपड़ियों को
भवन बना दो फिर सोने का।

## चाह रही

जन जीवन के ओ परिष्कार करने वालो !
तेरी जय दुनिया आज मनाना चाह रही

सदियों से जनता ऊबी है
चिन्ता – सागर में डूबी है
सब बदले, पर जीवन ठप है
युग की शासन की खूबी है

जन जन में ओ नव चेतनता भरने वालो !
तेरी जय दुनिया आज मनाना चाह रही

शासन बदला दुनिया बदली
फिर छा न सके दुख की बदली
जिसने अपना बलिदान दिया
उसने न कभी कुछ कीमत ली

भ्रष्टाचारी के अहङ्कार हरने वालो !
तेरी जय दुनिया आज मनाना चाह रही

संकल्प तुम्हारा अमर रहे
संघर्ष तुम्हारा अमर रहे
तिल-तिल घुल-घूल आखिर दम तक
चलने वाला यह समर रहे

जनता के हित ओ सत्पथ पर मरने वालो !
तेरी जय दुनिया आज मनाना चाह रही

भारत की नैया डगमग हो
तूफान भयंकर पग-पग हो
पर बने साधना ज्योति पुंज
साधक का मग फिर जगमग हो

अन्तर के ओ अज्ञान-तिमिर हरने वालो !
तेरी जय दुनिया आज मनाना चाह रही

# स्वेज समस्या

अन्तरिक्ष पर उमड़ रहा है
महा प्रलय का बादल
आज फूटने वाला है
सागर में फिर बड़वानल

धधक रही है भीतर–भीतर
ही अन्तर में ज्वाला
आसमान से धूमकेतु है
आज टूटने वाला

स्तब्ध खड़ी हैं सभी दिशाएँ
मौन पड़ा है सागर
बूँद–बूंद कर उमड़ पड़ा है
हालाहल का गागर

अहि–मानव है नया जहर
फिर आज उगलने वाला
दानव दल मानवता को है
पकड़ निगलने वाला

सावधान ओ मानव ! अपनी
ताकत फिर पहचानो
पशुबल से सौ गुना मनो–
बल को ताकतवर मानो

तेरे चरणों में दृढ़ता हो
तुम दलितों की आशा
उपनिवेश का पलट दिया है
तुमने उल्टा पासा

नव इतिहास बताएगा
जग को यह अमर कहानी
मटने वाली है महि से
दानवता की मनमानी

## मैं लिखता हूँ गीत

मैं लिखता हूँ गीत कि
तुम अपने स्वर में दुहरा दो

तुम पाओगे इसमें अपने
अन्तर की परिछाईं
शीतलता जल के समान
औ' ताप आग की नाईं

तुम देखोगे इसमें जगके
अन्तर की अभिलाषा
आकुल प्राण अलाप रहे हैं
आकुल मन की भाषा

ओ पूनम के चाँद! हृदय—
सागर को फिर लहरा दो
मैं लिखता हूँ गीत कि
तुम अपने स्वर में दुहरा दो

प्रतिविम्बित इसमें पाओगे
जग की क्रूर कहानी

मानवता की नंगी प्रतिमा
पर कुछ अजब निशानी

जो मनुष्य के स्वार्थ-पिण्ड का
एक दमकता तारा
काला सा पड़ता जाता है
छूता क्षितिज किनारा

नियमो को बढ़ने दो आगे
युग को कुछ ठहरा दो
मैं लिखता हूँ गीत कि
तुम अपने स्वर में दुहरा दो

पाकर अनुपम प्यार प्रकृति-
से भी न मिली कोमलता
शरद चाँदनी में धुलकर भी
मिल न सकी निर्मलता

जीवन सा अनमोल रतन धन
मुफ्त लुटा जाता है
दुर्बलता बढ़ती जाती है
मोह जुटा जाता है

आज द्रोह के गढ़ पर करुणा
का झण्डा फहरा दो
मैं लिखता हूँ गीत कि
तुम अपने स्वर में दुहरा दो

दिन पर दिन बढ़ती जाती है
मानव की शैतानी
तुम प्रलङ्कर फिर--सन्धानो
राग नया तूफानी

यह विज्ञानी इठलाता है
पाकर नूतन साधन
यह अभिमानी अब करता है
पशु - बल का आराधन

अहङ्कार हर, झहर - झहर
फिर शान्ति सुधा झहरा दो
मैं लिखता हूँ गीत कि
तुम अपने स्वर में दुहरा दो

## नया स्वर

एक नया स्वर बजता है
मेरे अन्तर के तार में
जल्द सुनाई पड़ने वाला
है सारे संसार में

जिसे हृदय मिल सका नहीं
कैसे समझे वह रागिणी
कैसे उसकी साँसों को
छू दे कविता अनुरागिणी

छोटी सी है परिधि
उसी के अन्दर जो बेचैन है
सिसक रही है जिसके
अन्तर में करुणा हत भागिनी

उसे ध्वस्त करने को मेरा
स्वर समझो अंगार है
घूम रहा है धरती पर जो पशु
मानव के आकार में

एक नया स्वर बजता है
मेरे अन्तर के तार में
जल्द सुनाई पड़ने वाला
है सारे संसार में

औरों की उन्नति से तिल-पिल
जलकर अब जो राख है
स्वयं अनीति-कुशल औरों पर
नैतिकता की साख है—

जमा रहा, ऐसे पापी को
समझाओ मत आज तुम
सौ, हज़ार क्या, इनकी संख्या
जग में लाखों लाख है

अनुशासन का गला घोंटता
अनुशासन के नाम पर
उसे डुबा देगा मेरा स्वर
चिन्ता की मझधार में

एक नया स्वर बजता है
मेरे अन्तर के तार में

जल्द सुनाई पड़ने वाला
है सारे संसार में
समझ सका जो स्वयं नहीं
क्या मानवता का मोल है

परख सका जो नहीं
किसी की प्रतिभा भी अनमोल है

बाहर की ही नहीं, हृदय की
आँखें भी जब बन्द हैं

समझ नहीं पाता सचमुच यह
सारी दुनिया गोल है

जो सिद्धान्त बघार रहा है
झूठ मूठ हर बात पर
उसे सुझा देगा मेरा स्वर
दुख के कारागार में

एक नया स्वर बजता है
मेरे अन्तर के तार में
जल्द सुनाई पड़ने वाला
है सारे ससाप में

यह जन-युग सचमुच जनता का
यह तो अपना राज है
भ्रम के जाल बिछाने वालों
के सिर पर यह गाज है

दलितों का दल मिलकर इसको
उस दल-दल में डाल दे
जिसमें छटपट करता इसका
पूरा एक समाज है

आओ दलितो ! मेरे स्वर में
तुम अपना स्वर घोल दो
जो ताकत इस स्वर में है
वह बच न रही तलवार श
एक नया स्वर बजता है
मेरे अन्तर के तार में
जल्द सुनाई पड़ने वाला
है सारे संसार में

## क्या हो रहा है

जमीं पूछती, आसमां रो रहा है
अहिंसा के साये में क्या हो रहा है

सुना था युगों से जहाँ को सिखाता
रहा ज्ञान की सीख ही देश मेरा

बताता चला आ राह सीधी
खिली रोशनी जब मिटाया अन्धेरा

उसी देश की आज छाती रँगी उफ !
कि सारे वतन का गरम खून देखो

जबाबे–तलब कर रहा है जहाँ यह
करो आज इन्साफ मजमून देखो

न समझो सदा के लिए सो रहा है
जमीं पूछती, आसमां रो रहा है

यही एक आवाज है हर लबों पै
कि खुद शर्म भी आज शरमा रही है

अमन चैन का भार सौंपा जिसे था
वही होश खो आज गरमा गई है

कोसी का परिचय मत पूछो
विश्वामित्र सगा भाई है
उसने सृष्टि नई की थी, यह
सृष्टि नाश करने आई है
धीरजवान कहाते हो तो
इसका नंगा नाच देख लो
अपने अन्तर के साहस की
सच्ची सच्ची जाँच देख लो
विषधर सब फूत्कार रहे हैं
और कलेजा कांप रहा है
पड़ा मृत्यु–शय्या पर कोई
जीवन – पथ को माप रहा है
किसकी सुनता कौन, विपद का
शंख – नाद होता घर घर है
जर्जर है घर – द्वार मनुज का
तार – तार बिलकुल जर्जर है
घड़ी – घड़ी पर यहाँ मृत्यु का
होता रहता है अभिनन्दन
धारा के कल – कल गर्जन पर
छल–छल हैं आँसू के क्रन्दन

## पावस का जन्म

धरती सिहर उठी मन ही मन

लरज गरज घन बोला

चन्दा आसमान में डोला

कड़ी जेठ की दोपहरी में

सरपट पुरवैया चलती थी

चिल चिल धूप धूलि से मिल मिल

तपती और स्वयं जलती थी

दूर क्षितिज पर खिंच आयी थी

काली सी बादल की रेखा

आज ग्रीष्म के गर्भाशय में

नन्हे पावस शिशु को देखा

सूरज तपता था हो जैसे

तपा आग का गोला

चन्दा आसमान में डोला

बढ़ आये सैनिक बादल के

दल के दल बंट कर मड़राये

रूखे स्वर, सूखे अधरों पर
रिम झिम बन बरबस छितराये

चढ़ आया तूफान टूट कर
लगे बरसने तड़-तड़ ओले

जान पड़ा यह उड़ जाएगा
पकड़ बाँह में पर्वत को ले

झंझा से लड़ने वाले
विटपों ने भी बल तोला
चन्दा आसमान में डोला

अभी वनस्पति के आँगन में
छायी थी कुछ अजब उदासी
गर्मी की ऊमस में गुम-सुम
सोच रहा था विकल प्रवासी

पच्छिम के उस पार क्षितिज पर
सन्ध्या विरहिन फिर मुसकाई
दिग दिगन्त ने साध लिया दम
प्रकृति नर्त्तकी भी सकुचाई

आज भयानक रस चिड़ियों ने
अपने स्वर में घोला
चन्दा आसमान में डोला

बैठ आम की डाली पर
कोयल ने पंचम तान अलापी
प्रथम दिवस आषाढ़ देखकर
नाच उठा मन-मुग्ध कलापी

मेघों के झुरमुट में चन्दा
आँख मिचौनी खेल रहा है
पवन बनाकर 'ट्राली' घन-
खण्डों को आगे ठेल रहा है

स्वाती की आशा में बैठा
चातक ने मुँह खोला
चन्दा आसमान में डोला

झींगुर ने झंकार शुरू की
मेढ़क उछल लगा टर्राने
जलती दूब लगा मुसकाने
दिल में शौक लगा चर्राने

बूंदा बांदी हुई कि कृषकों
के मन में उल्लास भर गया
हरियाली भर गयी कि
सरसिज के मुख से मृदु हास झर गया
विकल विहग ने विहगी के
अन्तर को आज टटोला
चन्दा आसमान में डोला

लगी कल्पना परी नाचने
धन-खेतों में साज सजाकर
जन-गण-मन को लगी नचाने
एक नया संगीत बजाकर
ये किशोर गन्ने के पौधे
लहराये कमला के तट पर
उमड़ी किन्तु विषाद घटा
हा ! कोशी तट के हर पनघट पर
धरती विवश बदलने वाली
है अब अपना चोला
चन्दा आसमान में डोला

## 'एक प्रश्न'

किसने तेरे अन्तर के
तारों को फिर झंकार दिया
अन्धकारमय इस जीवन को
आलोकित संसार दिया
किस छवि की सुधि में अपनी
सुधि सारी दुनिया भूल गई
किसकी सांसों के भूले पर
मानवता फिर भूल गई
किसने राह बनायी जिस पर
बिछे हुए ये शूल घने
किसके चरण कमल छूते ही
शूल बदल सब फूल बने
किसने तेरी अन्धी आँखों
में भर दी फिर ज्योति अमर
किसका पाकर एक सहारा
जीत गये तुम घोर समर
मानवता के भाग्य-गगन में

फूटी थी किसकी लाली
किसे देख दानवता ने फिर
अपनी आँखें सकुचा ली
घनीभूत थी जहाँ वेदना
पड़ी कामना रोती थी
जहाँ साधना छटपट करती
आखिर निष्फल होती थी
अभी हृदय के अन्ध कुहर में
किसने नव आलोक दिया
किसने पतितों की सेवा कर
दूर हृदय से शोक किया
तुम उसका ही नाम बेचकर
क्या करते हो सच बोलो
अपना ही ईमान उठाकर
अपनी धड़कन पर तोलो

## चुनाव गीत

पाँच बरस पर घूम रहे हैं
घर घर फिर एम० एल० ए०
मुझ गरीब के दरबाजे पर
भी लगते हैं मेले

पाँच बरस तक सूना फिर
रह जायेगा दरवाजा
आज बना जो सेवक
कल बनकर आयेगा राजा

कब गरीब की सुधि लेने की
फुरसत मिल पायेगी
मन की कली वोट पाकर बस
ज्योंही खिल जायेगी

नाक रगड़ कर रह जायेंगे
तब फिर सब मतदाता
मुश्किल से दर्शन देंगे
पल भर को भाग्य विधाता
जीने वालो ! मिल न सकेगा

तुमको फिर सन्तावन
बहती गंगा में कर धो लो
कर लो घर भर पावन
धीरज धरकर रहो कि
पूरी होगी सब अभिलाषा
तब तक पण्डितजी से सीखो
स्तुति करने की भाषा
ठोक बजाकर औरत लेती
मिट्टी का भी बर्तन
मत दाताओं ! तुमको भी
लाना है नव परिवर्तन
चौराहे पर खड़ा न रहकर
एक राह धरनी है
तुम सिद्धान्त सुनो मत
देखो किसकी क्या करनी है
खाल ओढ़कर घूम रहे हैं
बड़ों बड़ों के चेले
उन्हें खिला दो हाँ जी पुर के
चम्पा चिनिया केले

फटी हुई अपनी चादर को
अपने सीने वालो !
प्यास बुझाने हेतु सहम कर
आँसू पीने वालो ।
ठगने वालों की नजरों में
क्या काबा क्या काशी
सावधान हो कदम उठाना
भोले भारत वासी !
तेरे आँसू से धरती को
पाँच बरस है पटना
इस विहार की नरक–भूमि में
स्वर्ग एक पटना है
हिम्मत बाँधो ; पत्थर कर लो
अपना आज कलेजा
गंगाजी में डूब मरो तुम
पहले जा पहलेजा
मगर बिना समझे बूझे
मतदान नहीं करना है
वरना इसी नरक में रहकर
जीना औ' मरना है—

## प्रगति गीत

मैं काम करता जाऊँगा
जीवन की बाधाओं को
कत्लेआम करता जाऊंगा
जीवन में मिलने वालों का
मैं स्वगत करता आया हूँ
मरने की हुई जरूरत जब
मौके पर मरता आया हूँ
परवाह न है मुझको तेरी
मौके पर मरता जाऊंगा
मैं काम करता जाऊँगा
कहने वाले कुछ कहते हैं,
रुक कर उनका सुन लेता हूँ
उससे जो सार निकलता है
चुपके से सब चुन लेता हूँ
सबके मथने पर कुछ भी तो
परिणाम लेता जाऊंगा
मैं काम करता जाऊंगा

बहुतेरे ऐसे मिले जिन्हें
बातों से काफी मतलब है
पर जीवन की गहराई का
जो कुछ है थोथा अनुभव है
उनको मस्ती का नया नया
पैगाम देता जाऊँगा
बिगड़ा क्या यदि पगडंडी है?
इसको ही विस्तृत करलूंगा
सूखे उर से करुणा का रस
थोड़ा भी निःसृत कर लूंगा
विश्वास अटल है पत्थर को
भगवान बनता पाऊंगा
मैं काम करता जाऊँगा
हिम्मते – मर्द, मददे है खुदा
अपने पावों पर बल डालो
पीछे जो कदम खींचता है
उसको बस वहीं कुचल डालो
कह दो तेरी करनी का कुछ
अंजाम देता जाऊंगा
मैं काम करता जाऊँगा

जीता हूँ इसलिए कि जीता ही जा रहा हूँ
मिलता है जहर भी तो पीता ही जा रहा हूँ
किस इन्तजार में दिन चुपके से गुजरते हैं
घिसती हैं उम्र धीरे अन्दाम घिस रहा है
इज्जत औ आबरू की चक्की में पिस रहा है
इन्सानियत की किश्ती आँसू में तैरती है
इन्सान बैठ उस पर खेने की मिस बहा है
यह आसमां मिला भी लेकिन फटा हुआ ही
इफलास की सुई से सीता ही जा रहा हूँ
रोता नहीं हूँ दुनिया दिल की न जान ले फिर
कहता नहीं हूँ काफिर मिलके न जान ले फिर
यह राह जिन्दगी की मंजिल बडी पडी है
थकता नहीं हूँ कुदरत काहिल न मान ले फिर
दिल, जेब, हाथ, तीनों हैं एक साथ खाली
भरने की करके कोशिश रीता ही जा रहा हूँ

---